लोग

लोग

गिरिराज किशोर



राजकमल प्रकाशन
नयी दिल्ली पटना

सविता को

देश का स्वतन्त्र होना लगभग निश्चित हो गया था। नयी सामाजिक प्रवृत्तियाँ और शक्तियाँ अपना स्थान बना रही थीं। उस समय का अभिजात-वर्ग अपने-आपको डूबता हुआ महसूस करने लगा, आर्थिक स्तर पर ही नहीं, सामाजिक एवं मान्यताओं के स्तर पर भी। उस वर्ग से सम्बद्ध हर एक वर्ग के 'लोग' अपने-आपको 'छूट-गया' हुआ-सा महसूस कर रहे थे। उन लोगों के मन में इस नये परिवर्तन के प्रति अरक्षा, मूल्यहीनता, संस्कार-हीनता, उच्छृङ्खलता, विघटन आदि सब प्रकार की आशंकाएँ थीं। अंग्रेज़ों का जाना उस 'पूरे' वर्ग के व्यक्तिहीन हो जाने की सूचना थी। उनमें से कुछ बदलते हुए सन्दर्भों के अनुरूप अपने को ढाल पाने में असमर्थ रहे।

वे ही 'लोग' यहाँ हैं।

'लोग' में मेरठ, मुज़फ़्फ़रनगर आदि पश्चिमी ज़िलों में बोली जानेवाली 'खड़ी-बोली' का भी उपयोग किया है, जिससे अभिव्यक्ति में कुछ सहायता मिली है। उर्दू और अंग्रेज़ी शब्द भी हैं। उनसे तत्कालीन वातावरण अधिक उजागर होता है।

13, महात्मा गांधी मार्ग
इलाहाबाद

गिरिराज किशोर

यह तीसरा संस्करण है। जिस आत्मीयता से 'लोग' पढ़ा गया है उसके लिए पाठकों और पात्रों के बीच का तादात्म्य ही जिम्मेदार है। शायद जिन्दगी की सच्चाई ही रचना को ज्यादा दिन तक जिन्दा रखने में संजीवनी का काम करती है। लेखक तो, जिन्दगी के अनुभव की वृहदता के सन्दर्भ में, मात्र दृष्टि और कलम होता है।

तीसरे संस्करण को प्रकाशित करने के लिए मैं श्रीमती शीला सन्धू और राजकमल प्रकाशन प्रा. लि. का हृदय से आभारी हूँ!

आई. आई. टी., कानपुर — गिरिराज किशोर

1 जनवरी 1981

1

बाहर आया, बाबा को घेरे काफ़ी लोग जमा थे। बैठे हुए लोग बात-बात में रूस, जर्मनी, जापान, हिटलर का नाम ले रहे थे। बाहर से आनेवाले बाबा को झुककर सलाम करते और कहते, "राय साहब, बहुत-बहुत मुबारकबाद!"

बाबा का मुस्कुराना, उनकी मूँछों के फैलने से पता चलता था। किसी-किसी को भारी आवाज़ में जवाब भी देते थे, "शुक्रिया, आपको भी मुबारक!" बाबा का हाथ स्वतः ही कुर्सी की ओर उठ जाता था या चबूतरे से नीचे पड़े पलंगों की ओर संकेत कर देते थे। कुछ लोगों के आने पर बाबा टेढ़े होकर कुर्सी से उठने का आभास देते थे। आनेवाला झपटकर उनका हाथ अपने दोनों हाथों में लेकर कहता था, "राय साहब, शर्मिन्दा क्यों कर रहे हैं!"

पलंगों पर बैठे हुए लोग ज़्यादातर चुप थे। कुर्सियों पर बैठे लोगों में से कोई-न-कोई, कुछ-न-कुछ बोल रहा था।

"इस जीत में अपने ज़िले की जो भी शिरकत रही, वह सब आपकी बदौलत। मुझे याद है जब जंग का दौर-दौरा ज़ोरों पर था और आपने कमिश्नर साहब को इसी जगह दो मोटरें नज़र की थीं तो कमिश्नर साहब ने अपनी तक़रीर में कहा था—ये हुकूमत राय साहब जैसे वफ़ादार और जाँनिसार दोस्तों पर टिकी है। हुकूमत को ऐसे दोस्तों की 'वफ़ादारी' पर नाज़ है।"

बाबा की मूँछें एक बार को फिर फैल जाती थीं! चेहरे पर एक स्निग्धता आ जाती थी।

दीना की देखरेख में अन्दर से मिठाइयाँ लग-लगकर आ रही थीं। सब

ही तरह के मेहमानों में 'तक़सीम' की जा रही थीं। मैं जाकर बाबा की कुर्सी से सटकर खड़ा हो गया। नज़रों में एक अजनबीपन लिये सब-कुछ होते देखता रहा। बाबा इन सबसे तटस्थ थे।

जब तक मैं दूर खड़ा रहा था, किसी ने मेरी ओर ध्यान नहीं दिया था। लेकिन बाबा की कुर्सी के पास पहुँचते ही सबकी 'तवज्जोह' मेरी तरफ़ खिंच गयी थी। ख़ासकर कुर्सियों पर बैठे लोग बड़ी ललक से मुझे अपने पास बुला रहे थे—'आइये, छोटे राय साहब !' मैं बड़ी दुविधा में पड़ गया था। समझ में नहीं आ रहा था कि इनका ध्यान बाबा से हटकर मुझ पर इतना ज़्यादा क्यों है ? एक-दो लोगों ने तो कुर्सी से उठकर मुझे अपनी ओर खींचा भी। मैं वहीं-का-वहीं मूर्ति बना खड़ा रहा। जो साहब मेरा हाथ पकड़कर सीने से लगा लेने के लिए आकुल थे उनकी नज़रें बाबा के चेहरे के चक्कर काट रही थीं। लोगों द्वारा मुझे प्यार किये जाते देखकर बाबा की मूँछों के फैलाव के साथ आँखों में भी तरलता आ जाती थी। मेरी नज़र जब सहन में बिछे पलंगों पर बैठे लोगों पर जाती थी तो देखता था लोगों की आँखें मुझ पर टिकी हैं और दाँत बाहर को निकले हुए हैं···। इस स्थिति में वे लोग काफ़ी देर से थे।

शायद बाबा ने मुझे इस हाथापाई से बचाने के लिए ही पीछे हाथ बढ़ाकर अपनी कुर्सी के बराबर में खड़ा कर लिया। मेरी आँखों में उभरे उस अजनबीपन को दूर करने की गरज़ से उन्होंने पूछा, "जानते हो···आज क्या है ?" मैंने झटके-सी गरदन हिलाकर इनकार कर दिया।

बाबा ने गोद में बैठाकर हँसते हुए बताया, "आज हमारी सरकार बहादुर जीत गयी···जर्मनी, जापान, इटली, सब को हरा दिया।" मुझे उस समय इसमें कोई आश्चर्य नहीं दिखलायी पड़ा था। एक बार बाबा ने ही बताया था कि सरकार के हुक्म को टालना जुर्म है। मैं समझ गया था सरकार ने हुक्म दे दिया होगा 'हार जाओ' और वे सब हार गये होंगे।

उसके बाद जो भी नया व्यक्ति बाबा को मुबारकबाद देने आता वह मुझे भी मुबारकबाद देता—"छोटे साहब को भी मुबारक हो !" यह बात मेरी समझ में बिलकुल नहीं आ रही थी कि 'मुबारक होना' क्या होता है। 'मुबारक होना' कुछ ऐसी-सी ध्वनि देता जैसे 'बुख़ार होना'। मैं समझ

नहीं पाता था कि इस शब्द से लोगों के चेहरे एकदम क्यों बदल आते हैं। बुखार होना कोई अच्छी बात थोड़े ही है। अपने लिए मुबारकबाद सुनकर मेरी दृष्टि धरती से जुड़ जाती थी जैसे तार से बांध दी गयी हो। मुझे चुप देखकर बाबा उसी तरह मुस्कराते हुए कहते थे, "बेटा, तुम भी कहो—शुक्रिया, आपको भी मुबारक हो!" मैं कह नहीं पाता था और सोचने लगता था मुझसे गाली के बदले गाली दिलवायी जा रही है। बाबा धीरे-से कहते थे, "तुम बड़े 'गुस्ताख़' हो गये हो।"

दीना को बुलाकर कहा, "इसे अन्दर हवेली में ले जाओ।"

दीना ने मुझे वहाँ से ले जाकर दहलीज में अपने पास बैठा लिया। पूछने लगा, "तुम बोलते क्यों नहीं? सरकार के पास इतने बड़े-बड़े लोग आ रहे हैं, सब कहेंगे ये तो बोलना भी नहीं जानते। बड़े होने पर ये लोग तुम्हारे पास भी इसी तरह आया करेंगे।"

दीना के ऊपर मुझे गुस्सा तो बहुत आया था। मन हुआ था कि उसको 'रिक़ा' कर चड्ढी गाँठ लूँ जैसा छोटेपन में किया करता था। अब बड़ा हो गया था। वह शायद मेरी नाराजगी समझ गया। मुझे एक तश्तरी में मिठाई लाकर दे दी। मिठाई खाता हुआ मैं सोचने लगा, 'छोडो'! मिठाई खाते-खाते पूछा, "लेकिन ये मिठाई क्यों बँट रही है?"

दीना ने बतलाया, "हमारी सरकार बर्तानिया जीत गयी।" मैंने अपनी शंका का समाधान दीना से ही किया, "सरकार को जीतने की क्या जरूरत है···हुक्म दिया और जीत गयी। वह कौन कुश्ती लड़ती है? बाबा कहते हैं सरकार से भला कौन लड़ सकता है। बाबा तक सरकार से डरते हैं···"

उसने बात को दूसरी तरह से बताया, "हमारी सरकार और जापान, जर्मन, रूस के बीच जंग हुआ था, उसमें सरकार जीती है।"

"जापान, जर्मन, रूस कौन है?"

"सात समन्दर के मुलक है, बड़ी ठण्ड पड़ती है।"

"हमारे यहाँ से भी ज्यादा?"

"हाँ, बर्फ जमा रहता है!"

"फिर तो लोग खूब खाते होंगे।"

मैं आसमान की तरफ़ देखते हुए मिठाई खाते-खाते उसकी बातें सुन
रहा था। इतने में बाबा ने पुकारा, "दीना।" वह मुझे अकेला छोड़कर
झटपट चला गया। मुझे बाबा पर थोड़ा गुस्सा आया। मन-ही-मन कहा,
'बाबा के पास इतने बड़े-बड़े आदमी बैठे हैं, फिर भी उन्होंने हमारे पास से
ताऊ को बुला लिया।' दरअसल दीना को हम ताऊ कहते थे।

थोड़ी ही देर बाद वह लौट आया, दो पंखाकुलियों को बुलाकर 'पंखे'
लेकर खड़े हो जाने का हुक्म दिया। मुझे हाथी के कानों-जैसे बड़े-बड़े हिलते
हुए खजूर के पंखों को देखकर सदा लगता था, उन्हें हिलानेवाला हाथी हो
गया है। इस रूप की कल्पना करते ही उनकी नाक सूँड़ की तरह लटक
जाती थी। दो दाँत बाहर निकल आते थे। कल्पना मात्र से मुझे हँसी आने
लगती थी। हँस चुकने पर जब गम्भीर होता था तो मेरी आँखें समगति से
हिलते उन पंखों के साथ इधर से उधर हो...

उत्पन्न होनेवाली आवाज़ वहाँ के पूरे वातावरण में डुबकियाँ लगा रही थी।

"लोग खुशी में मुबारकबाद क्यों देते हैं, मिठाई क्यों नही देते ?" दीना ने मेरी ओर देखते हुए कहा, "हिलाओ मत, चिमनी टूट जायेगी।" उसके इतने कहने से मुझ पर उल्टी प्रतिक्रिया हुई थी। मैं उसकी पीठ से और सट गया। ज़िद करने लगा था, "ताऊ, बता मुबारकबाद क्यों देते हैं ?"

"मिठाई वह देता है जिसके यहाँ खुशी होती है।"

"तो हमारे यहाँ क्या खुशी है ?"

उसे थोड़ी झुँझलाहट-सी आ गयी थी, "बताया तो···हमारी सरकार जीती है।"

"सरकार मिठाई क्यों नही बाँटती, बाबा क्यों बाँट रहे है ?"

मेरे धक्के से दीना के हाथ से चिमनी गिरकर टूट गयी। चिमनी के अन्दर जो हल्का-सा अँधियारा भरता गया था, उसने एकाएक बिखरकर उस अँधियारे को और गहरा बना दिया। मैं देख तो नही सका पर मुझे लगा, मेरे चेहरे का कोई चटकीला रंग चुटकी से पकड़कर हटा दिया गया है, मैं मरगिल्ला-सा हो गया हूँ। मैंने दीना की तरफ डरते-डरते देखा और धीरे-से कहा, "मैंने तो कुछ भी नही किया।"

उसके चेहरे पर हँसी आ गयी और बोला, "अच्छा, अब तुम कुर्सी पर जाकर बैठ जाओ।" मैं जाकर चुपचाप बैठ गया। ख़ामोशी के साथ लैम्पों और लालटेनों का जलना देखता रहा। लैम्पों को एक-एक कर जलाया जा रहा था। बत्ती को दियासलाई से जलाते ही पहले वह भभकती थी और फिर धुआँ छोड़ती-सी पीली-पीली मटमैली लौ छोड़ने लगती थी। लेकिन चिमनी लगने पर पहले चिमनी पर भाप की हल्की-सी परत दिखलायी पड़ती, फिर रोशनी खुलती जाती थी। टूटे हुए काँच के टुकड़े गोलाइयों पर सुनहरे हो गये थे। धीरे-धीरे कतार में रखे बीस-पच्चीस लैम्प और लालटेन जल गये थे। उनकी मद्धम-मद्धम-सी रोशनी की धारा पूरे आँगन में बहने लगी थी। मैं चाहता था उन सब लैम्पों को एक साथ रखा रहने दिया जाय।

अभी भी अँधियारे में धुँधलेपन का अंश शेष था। नत्थो एक-एक लैम्प उठाकर बाहर ले जा रहा था। लैम्प की रोशनी उसके चेहरे की एक-एक

लिया। बेंत जाँघ से हटकर जूते के साथ पैंतालिस डिग्री का कोण बनाने लगी। अब मैं उनके बिलकुल सामने था और पीछे दीना। कुछ सैकेण्ड तक पूरी तरह खामोशी रही। बाबा ने पूछा, "कहाँ गये थे ?"

मैंने दीना की तरफ देखा। बाबा शायद समझ गये, आवाज़ को मुलायम करते हुए कहा, "बाजार, अच्छा किया !"

मैंने देखा उनके चेहरे पर चिकनाई का एक जाला-सा आ गया। मूँछें थोड़ी फैली फिर सिकुड़ गयी।

उन्होंने दीना से कहा, "इसको काला सूट पहनाकर ले आओ, हमारे साथ क्लब जायेगा। आज वहाँ दावत है।" उन्होंने दो कदम आगे बढ़कर मेरे सिर पर हाथ रख दिया। उनका दूसरा हाथ ठीक उसी तरह बेंत की गोल मूँठ पर रखा हुआ था।

मैं कपड़े बदलकर आया तो बाबा ने भी सूट बदल लिया था। बन्द-गले के कोट की जगह उन्होंने खुले-गले का कोट पहना था और 'बो' लगायी थी। उनके इस वस्त्र-परिवर्तन मात्र से ही ऐसा लगने लगा था, बाबा हँसते भी हैं।

बाबा और मैं गाड़ी में बैठे तो दीना और वज़ीर नीचे खड़े हम लोगों को गाड़ी में बैठते देख रहे थे। नत्थी फिटन के पीछे पायदान पर खड़ा हो गया था। उसकी मात्र गर्दन ही खुले-टब के ऊपर उठी दिखायी पड़ रही थी। बाबा के सामनेवाली सीट पर मैं बैठा था, एक अदद छोटा-सा आदमी। कोच-बक्स पर वज़ीर। वज़ीर ने एक-दो बार नजर बचाकर मेरी ओर देखना चाहा। लेकिन मैं अभी तक उससे नाराज था।

गाड़ी में बाबा ख़ामोश बैठे थे। घोड़ी की टाप लयात्मक ढंग से उभरती और डूबती मालूम पड़ रही थी। उसकी टाप से मुझे तो कोई ख़ास अहसास नहीं हुआ लेकिन बाबा ने वज़ीर से गाड़ी रोकने के लिए कहा। बाबा का रास्ते में गाड़ी रुकवाना कोचवान के लिए हमेशा खतरनाक साबित होता था। गाड़ी रोककर वज़ीर सामने आ खड़ा हुआ। "घोड़ी लंग क्यों कर रही है ?" मैंने देखा वज़ीर का चेहरा एकदम स्याह पड़ गया, "जी सरकार···!"

"मैं पूछता हूँ, घोड़ी लंग कर रही है या नहीं ?"

बाबा के पहुँचते ही काफी से ज्यादा लोग खड़े हो गये। चारों अंग्रेज और पाँच-छह हिन्दुस्तानी बैठे रहे। उन सबका न उठना मुझे बुरा लगा। मेरे दिमाग मे तुरन्त एक बात आयी, "बैठे हुए लोग ही शायद सरकार हैं।" बाबा पहले बीचवाले अंग्रेज के पास गये और झुककर कहा, "लांग लिव दी किंग, मे दी जैक फ्लाई हाई"

बीचवाला अंग्रेज भी बाबा से हाथ मिलाने के लिए उछलकर खड़ा हो गया। वे तीनों अंग्रेज भी बाबा से हाथ मिलाने के लिए उठ खड़े हुए। आख़िरकार उन बैठे हिन्दुस्तानियों को भी खड़े होना पड़ा।

उन चारों मेमों मे से एक ने बढ़कर मेरा हाथ पकड़ते हुए कहा, "ओह वैल रा' सा'ब, लवली चाईल्ड।"

बाबा ने एक कदम बढ़कर थोड़ा झुकते हुए कहा, "गुड इवनिंग मिसेज ब्राउन, आई एक्सटेण्ड माई कॉन्ग्रेच्युलेशन्स !"

"थैंक्यू ! टू यू टू।"

बाबा गर्दन को पूरी तरह से झुकाकर एक कदम पीछे हट गये।

बाबा ने मुझे भी 'साहब' और 'मेम साहब' को 'गुड इवनिंग' करने के लिए कहा। मैंने 'गुड इवनिंग' करके हाथ बढ़ा दिया। यह मेरी आदत पड़ गयी थी। 'गुड इवनिंग' या 'गुड मॉर्निंग' कहने के साथ ही मेरा हाथ स्वतः बढ़ जाता था। मिसेज ब्राउन ने हाथ मिलाकर, तुरन्त हाथों पर उठा लिया। मेरा साँस घुटने लगा। एक खास तरह की अपरिचित-सी गन्ध मेरी नाक मे घुस गयी थी। चेहरे की खाल पर 'दाफड़' नजर आ रहे थे। जब मैं उनके हाथों से छूटा तो लगा किसी अनजानी मुश्किल से मुक्ति पा गया हूँ। हालाँकि उन्होंने मुझे तुरन्त ही छोड़ दिया था।

दूसरे अंग्रेजों तथा बची हुई मेमों ने भी हँसी-हँसी मे ही मुझसे गुड इवनिंग की और हाथ मिलाया। मैं देख रहा था हिन्दुस्तानी महिलाएँ मुझे अंग्रेजों से हाथ मिलाते देखकर बहुत प्रसन्न थी। मुझे हाथ मिलाते और गुड इवनिंग करते देखकर साहबों और मेम-साहबो के चेहरों पर उसी तरह का आश्चर्य था जैसे कुत्ते को सब्जी की टोकरी मुँह मे लटकाये जाते देखकर हिन्दुस्तानियो के चेहरों पर आ जाता है। अंग्रेजों की देखा-देखी हिन्दुस्तानी अफ़सर भी अपने चेहरे पर वही भाव इकट्ठा करने का प्रयत्न

बात रहे थे। उन्होंने भी मुझसे हाथ मिलाने के लिए अपने हाथ बढ़ाये। मैंने बाबा की ओर देखा, 'इन लोगों से हाथ मिलाकर ठीक होगा?' बाबा ने मुस्करा कहा, "हाथ मिलाओ।" मुझे कुछ अजीब सा लगा, आंखों में खिलता हुआ सुख सब इन लोगों के लिए रहा है।

कुछ देर बाद सब लोगों के लिए ट्रे में पेग आ गये। तत्काल सब हिन्दुस्तानी अधिकारियों के चेहरे पर एक विचित्र सा भाव। हिन्दुस्तानी स्त्रियों की साड़ियों के पल्लू-आंचल सिर पर खिसके और मुस्कराहट साथी पर हाथ रख लिये। उनके चेहरों पर भी एक अजीब तरह का असमंजस था। लेकिन पश्चिमी इन लोगों की तरफ न देखकर अपनी मालकिनों का अभिवादन ले रही थीं। हिन्दुस्तानी अफसरों ने भी पेग थाम लिये थे। जो एक हिन्दुस्तानी महिला के बराबर खड़ी थी, उसने अपना पेग सलाहकारों महिला की ओर बढ़ा दिया, 'मिसेज सक्सेना, तुम भी लो न।'"

मिसेज सक्सेना ने गुस्सा 'हूं' की और मुंह फेर उन्होंने पति की ओर देखने लगीं। मिस्टर सक्सेना की नज़र अपनी पत्नी की ओर ही थी। मुस्करा छोड़कर आगे।

"ओह डियर, इट इज नाट फार मी! इट इज ओनली फार लाईट्स [illegible] ... मिस्टर [illegible] ही।" सब लोग जोर से हँस दिये। उन महिलाओं के चेहरे और अधिक सुर्ख हो गये।

बाबा के सामने जब अमरीकी विमान के चक्कर लगाया, उनमें से एक गोरा साहब उठकर खड़ा हुआ, "जेन्टलमैन, अब मजा है, आप [illegible] देर तक मार्च करा (इसे) खत्म कर दिया जाय।... आप और [illegible] गांव, जब गांव का बाबू बनेगा, मिस्टर [illegible] एक [illegible] बाबू घर-बार-सब साथ गांव का मालूम है बाहर चीर जायेगा।"

मैंने देखा बाबा की मुट्ठी मेज़ की मोट पर कस गयी है। वे धीरे-से कुर्सी से उठे। उनके चेहरे पर आत्मग्लानि इतनी तुम्हें थे। उनके हाथ में भी शराब की जगह नमक का गिलास था। [illegible] हमारा ही था, बल्कि के गिलास की जगह नमक जौ के गिलास में था। उनके चेहरे पर भी खास तरह का खिंचाव आ गया। आगे क्या हो? बाकी लोगों के चेहरों पर एक

बनावटी-सी मुस्कान थी। लेकिन वे अफ़सरान जो बाबा के आने पर बैठे रहे थे काफ़ी ज़ोर-ज़ोर से हँस रहे थे। उनमें से एक नया-नया ज्वाइण्ट मजिस्ट्रेट आया था, बड़ी-बड़ी ज़ोर-ज़ोर से कह रहा था, "आफ़कोर्स सर, इट इज़ दी टाइम आफ़ फेस्टीविटी—लेट दी यूनियन जैक फ्लाई ऐवरी व्हेयर !" अन्तिम वाक्य उसने गाते हुए कहा। बाबा ने एक नज़र उसकी ओर देखा, और खड़े हुए गोरे साहब मिस्टर स्मिथ से कहा, "यस आई टू वेलकम योर प्रोपोज़ल !"

कुछ ठहरकर बाबा ने अपने शरीर को हिलाकर बताया, "जब मैं इस तरह करूँगा, आप दोनों तो ज़मीन देखेंगे, एण्ड बोथ स्वीट लेडीज़ विल बी इन माई लैप।" क्षण-भर के लिए सन्नाटा खिंच गया। हण्डों और गैस-लालटेनों की सूँ-सूँ जो काफ़ी देर से ग़ायब हो गयी थी, सुनायी पड़ने लगी।

स्मिथ हाथ का पेग एक साथ गले में उड़ेल गया था। उसके चेहरे का क्रोध हण्टर के निशान की तरह उभर आया था। कई लोगों के चेहरों से लग रहा था—उनकी अक्ल एकाएक फुर्र हो गयी है। स्मिथ की बर्बरता के बारे में कई प्रकार की कहानियाँ प्रसिद्ध थीं। खानबहादुर साहब तक अपनी कुर्सी पर अध-उठे से हो गये थे।

कलक्टर मिस्टर ब्राउन अचानक खड़े होकर ज़ोर-ज़ोर से हो-हो करके हँसने लगे, "वेल सेड, राय सा'ब। मिसेज़ ब्राउन आलवेज़ ऐसा अकेज़न पर प्रिट्टे करटा···"

ब्राउन साहब ने मिसेज़ ब्राउन की तरफ़ आँख मारी। वे तुरन्त बोलीं, "ओह नो, मिस्टर ब्राउन, आई विल नाट प्रिट्टे राय सा'ब। ही इज़ ए फ़ाइन इण्डियन।" बैठे हुए सब लोगों ने पहली लम्बी साँस ली और हँसे। खान-बहादुर साहब ने भी पीछे कुर्सी से पीठ टिका ली।

मिस्टर ब्राउन ने स्मिथ के कन्धे पर हाथ रखकर धीरे-से कहा, "डोण्ट वरी !" स्मिथ के चेहरे पर खिंचाव काफ़ी देर तक बना रहा। वह अपनी नेक-टाई को बार-बार उँगली पर लपेट रहा था।

मैं बातों को समझ तो नहीं रहा था, परन्तु लग रहा था 'सरकार' अब बाबा को भी हरा देगी। बाबा के हारने के दृश्य की कल्पना करके रुआँसा-सा होता जा रहा था। मेरा पक्का ख़याल था, हारनेवाले के कपड़े

ढंग से हँस दिये। उनके हँसने से लगा, उन्होंने भी कुछ भिन्न प्रकार से हँसकर 'लाइफ एन्ज्वाय' की है।

मैं कुर्सी पर बैठा-बैठा टूलने लगा था। मिसेज ब्राउन ने बाबा से कहा, "राय सा'ब, दिस पुअर बाय इज़ फीलिंग ड्राउज़ी!" मैं तुरन्त चेतन हो गया। बिन सोचे-समझे कहने लगा, "नहीं तो···मैं तो जग रहा हूँ।" बाबा ने नत्थी को बुलवाया और कहा, "इनको गाड़ी से घर छोड़ आओ।" सबके बीच से मुझे मात्र सो जाने के कारण भेजा जाना बड़ी बेइज़्ज़ती लग रही थी। पर बाबा के सामने कुछ कहने में असमर्थ था। जब भी मैं आता था, जाते समय बाबा एक ताश और टेनिस की दो गेंद दिलवाया करते थे। मार्कर को बुलाकर उन्होंने आज भी कह दिया। इस बार दो ताश और दो गेंदें मुझे दे दी गयीं। लेकिन बाहर जाकर मैं घर लौटने के लिए तैयार नहीं हुआ।

वज़ीर ने नत्थी से कहा, "छोटे भैया को गाड़ी में बैठा दो।" धीरे-से समझाया, "जब सो जायेंगे तब ले चलेंगे।" नत्थी ने मुझे गाड़ी में बैठाकर सिगरेट सुलगा ली और मेरे सोने का इन्तज़ार करने लगा।

एक कतार में कई फ़िटनें खड़ी हुई थीं। सामने की ओर खुली हुई तीन कारें थीं—एक कलक्टर साहब बहादुर की, दूसरी कप्तान साहब की और तीसरी नवाब साहब की। नवाब साहब का ही ड्राइवर उन दोनों कारों की भी देखभाल कर रहा था।

फ़िटनों के घोड़ों के मुँह पर रातब के तोबरे चढ़े हुए थे। वे मच्छरों के कारण गर्दन हिला-हिलाकर दाना खा रहे थे। जब उनकी गर्दनें हिलती थीं तो उनके सुनहरी सरपेचों पर ठहरी चमक हिल उठती थी। एक ख़ास तरह की गन्ध महसूस होने लगी थी, जो घोड़ों और साईसों की उपस्थिति का अहसास करा रही थी। कई घोड़े एक टाँग को थोड़ा मोड़कर तीन टाँगों पर खड़े थे। किसी गाड़ी का घोड़ा, शायद आदतन, पिछला पाँव बार-बार जमीन में मारकर उस पूरे वातावरण को बजा रहा था।

लगभग सब ही साईस इकट्ठे थे। उनकी मुट्ठियों में सुलगी बीड़ियाँ और सिगरेटें थीं। जब वे दम लगाते थे तो अँधेरा काफ़ी पारदर्शक हो जाता था और चेहरे साफ़ दिखलायी पड़ने लगते थे।

मसाले खिलाय-खिलाय के घोड़े की तेजी बनायी जात है। हमहू साईस लोगन को भूसा की बोरी !"

वजीर के चेहरे पर क्रोध आ गया। झटके से बीडी फेंककर बोला, "हम छज्जू नही, उसके सरकार को तुमने बेस्वा कह लिया…कुछ बोला नहीं। हम ऐसे मालिक के साईस हैं जो बड़े-बड़े तहसीलदार को खूंटे से बँधवा देते हैं। तुम्हारा भुरकुस निकाल देंगे।" वजीर खड़ा होकर बाँहें चढ़ाने लगा।

कई साईस एक साथ खड़े हो गये और बीच-बचाव करते हुए बोले, "अरे चौधरी, तुम किसकी बात पर आ रहे हो, ये तो पगला है।"

"पगला ! अरे कल तक हमारे साथ घसियारा का काम करता रहा, आज मालिकों के बारे मे बात लड़ाता है। ससुर, रोज घोड़ों को मलने के वास्ते आयी इसपिरिट पी जाता था।"

परसादी आग्नेय नेत्रों से उसकी ओर देखता हुआ खड़ा रहा, कुछ बोला नहीं।

कुछ जगता, कुछ सोता मैं ये सब बातें सुन रहा था। वजीर का चिल्लाना सुनकर मैं थोड़ा और चेतन हो गया। नत्थी मेरे पास से हटकर वजीर के पास पहुँच गया था। उसकी मुद्रा कुछ ऐसी थी, बस 'हुश' करने की देर है।

नवाब साहब का दाढ़ीवाला ड्राइवर बग्घियों की कतार के बिलकुल सामने अपनी फोर्डियन मोटर मे बैठा टव्वा-सा इन सबकी बातें सुन रहा था। दरवाजा खोलकर धीरे-से उतरा और अपने मालिक की चाल का अनुकरण करता हुआ साईसों के पास आ खड़ा हुआ। गर्दन हिलाकर बोला, "अमाँ खुदा का कहर तुम पर…आप लोगों की आवाज़ें अन्दर जा रही होंगी। आज के दिन आप लोग फिसाद पर आमादा हैं। खुदा से दुआ माँगो कि सरकार-ए-बर्तानियाँ का सितारा दिन-ब-दिन बुलन्द हो !" साईसों में से एक ने बड़े ओछेपन से उसका समर्थन किया, "हाँ, ये तो हाजीजी ठीक कहते हैं…आखिर मोटर के डरेवर ठहरे।" हाजीजी के चेहरे पर ठीक वही भाव आ गया था, जो किसी छोटे आदमी द्वारा खुशामद किये जाने पर उसके मालिक के चेहरे पर आ जाता होगा। उस साईस के

इतना कह देने पर भी उन सब साईसों के 'परिवेश' में कोई अन्तर नहीं आया। तनाव बदस्तूर बना रहा। उसी साईस ने उस तनाव की रस्सी ढीली करने के लिए एक बार और जोर मारा, "हाजीजी, विलायत के राजा का राज भी राजा रावन के राज की तरह ही है, राजा रावन का भी सूरज चाकर था। वहाँ भी कभी सूरज नहीं डूबे था।" इस बात ने सब लोगों का ध्यान आकर्षित कर लिया, घोड़ों की तरह सबके कान खड़े हो गये।

हाजीजी अपनी दाढ़ी पर हाथ फेरते हुए बोले, "हुँह, है तो! लेकिन अपने मुहम्मद साहब का इकबाल भी कुछ कम नहीं था।"

उस साईस ने हाजीजी की बात की ओर ध्यान न देकर अपनी बात जारी रखी, "पर विलायत का राजा हमारे मुल्क में कभी आया नहीं, इतनी दूर बैठ के राज कैसे चलाता होगा?"

एक और साईस बीच में ही बोला, "तू भी बोदा है, इसने बड़े-बड़े हुक्काम रख छोड़े हैं, बड़ा-लाट, छोटा-लाट, कलक्टर, जज, कप्तान, राजा, राव सब उसी का राज तो चलाते हैं।"

परसादी का गुस्सा कम हो गया था। तुरन्त बोला, "तो ई अगर राव-राजा भी हमार किसान कारिन्दों की तरह खाल खींच रहे···तो राजा को का फिकर होई।"

हाजीजी अपने कत्थे के टुकड़ों जैसे दाँत निकालकर ही···ही···करके हँस दिये, "हाँ ठ, ये तो सब चलता है, बड़े लोगों को इन बातों की ज्यादा परवाह नहीं होती। हम गाड़ी में एक गैलन कम तेल डलवायें तो नवाब साहब कौन पूछने बैठेंगे। बड़े लोगों का इकबाल भी यूँ ही थोड़े ही बड़ा होता है, अरे उनके दिल बड़े होते हैं। हाथी के पाँव में सबका पाँव! औ' मियाँ जितना बड़ा आदमी उतनी ही बड़ी गुंजायश! हम ड्राइवर, तुम साईस··· हम लोगों में भी गुंजायश का उतना ही फरक होगा।"

शायद, अन्दर लोग उठने लगे थे। बशीर वहाँ से हटकर चला आया था, कुछ-कुछ बड़बड़ा रहा था।

उनके उठने का खटका बाहर कुण्डली मारे बैठे हुए साईसों को भी लगा। वे तुरन्त अपनी-अपनी गाड़ियों के पास पहुँचकर घोड़ों के तोबड़े

उतारने लगे। तोबरे उतारने पर, नाक बजाकर घोड़ों ने घुड़-घुड़ी ली तो साईसों के मुँह से आदतन निकल पड़ा 'शाबा मेरे शेर।' साईसों के चेहरे पर फिर वही दयनीयता का भाव मूर्तिमान हो उठा। कन्धों पर पड़े साफ़े सँभल गये। आँखें मालिकों के आने के पहले से ही झुक गयी।

गोरे साहबों के पीछे-पीछे कई लोग चल रहे थे। दो गोरे पाँवों में थोड़ी लड़खड़ाहट होने पर भी, सीधे चलने का प्रयत्न कर रहे थे। मेमें किसी बात पर आपस में हँस रही थी। साईस लोग अपने को परेड में खड़ा हुआ-सा महसूस कर रहे थे। कारों के पास आने पर उस नये ज्वाइण्ट-मजिस्ट्रेट ने दरवाजा खोलने के लिए तैयार हाजीजी को पीछे ढकेलकर स्वयं दरवाजा खोल दिया। वे लोग जल्दी-जल्दी उन दोनों कारों में भर गये। एक मिसेज ब्राउन चला रही थी, दूसरी मिस्टर स्मिथ।

उन सबके चले जाने पर, उस ज्वाइण्ट-मजिस्ट्रेट ने (ब्राउन साहब की ओर से) विजयोत्सव में सम्मिलित होने के लिए सब लोगों को धन्यवाद देते हुए कहा, "वी मस्ट प्रे फ़ॉर दी लाग लाईफ़ ऑफ़ अवर क्राउन।"

उसके बाद लोग गाड़ियों के हिसाब से बँट गये। कुछ लोगों को गाड़ी-वालों ने साथ चलने का निमन्त्रण दिया और कुछ लोगों ने स्वयं पूछा, "आप तो घर ही जायेंगे?"

हाँ या ना के बजाय, इस सवाल का जवाब यही दिया, "आइये, मैं आपको रास्ते में छोड़ दूँगा।"

बाबा के साथ खानबहादुर इकरामुल हक़ और डा. हालदर बैठे। मुझे गाड़ी में ही देखकर उन्होंने नत्थी की तरफ़ देखा, नत्थी ने बज़ीर की ओर। बज़ीर ने कहा, "गये नहीं सरकार, जिद करने लगे।" बाबा ने जवाब नहीं दिया, खानबहादुर की ओर देखकर बोले, "तशरीफ लाइये।" पहले खानबहादुर फिर डा. हालदर गाड़ी में सामने की तरफ बैठे। पीछे की सीट पर मेरे बराबर में ही बाबा बैठ गये। खानबहादुर ने मेरी ठोडी में हाथ लगाते हुए कहा, "बरखुरदार, कभी हमारे ग़रीबखाने पर भी तशरीफ़ लाइये।"

डा. हालदर बीच ही में बोल उठे, "राय शा'ब, शाला स्मिथ बडा हरामजादा है, आज क्लब में बोरा (बड़ा) टेनसन क्रियेट कोर दिया।"

बाबा ने कोई जवाब नहीं दिया।

खानबहादुर को भी यह बात उठायी जानी ठीक नहीं लगी, बात बदलते हुए बोले, "डाक्टर साहब बुढ़ापे की भी कोई दवा है, आप लोग तो खुदा के भाई होते हैं, चीर-फाड़कर खड़ा कर देते हैं, फिर टाँके लगाकर जोड़ देते हैं।"

डाक्टर साहब हैं···हैं···हैं करके हँसने लगे। बाबा ने थोड़ा-सा मुस्कुराकर कहा, "किस बुढ़ापे का जिकर कर रहे हैं, शक्ल से तो इन्शाल्लाह जवान ही हैं!"

डाक्टर साहब इस बार भी हैं···हैं···हैं···करके हँस दिये। खान-बहादुर ने लम्बी साँस लेकर कहा, "आप क्या जानें राय साहब, आप तो इस सबसे बरी हैं। कहीं नयी बेगम ने कह दिया, अमाँ आप तो···"

बाबा ने उनकी बात बीच में काटकर कहा, "माफ़ कीजिए, कम-अज़-कम शक्ल से तो नहीं ही कहेंगी।"

खानबहादुर ने निवृत्ति के मूड में कहा, "बाकी आप फ़िक्र न करें···" कोच-बक्स पर बैठे साईस की तरफ़ बाबा की नज़र चली गयी। नत्थी भी उसके बराबर में ही कोच-बक्स पर बैठ गया था। खानबहादुर भी समझ गये। डाक्टर हालदर हैं···हैं···करके हँसते रहे।

रात काफ़ी थी। सड़क बिल्कुल सुनसान हो रही थी। थोड़ी-थोड़ी दूर पर लैम्प-पोस्टों की रोशनी मैले कपड़ों में लिपटी-सी सड़कों पर मौजूद थी। कभी-कभी जब कोई कुत्ता या जानवर सामने आ जाता था, वज़ीर पाँव से घण्टी बजाता था। सूनेपन की पर्तें और मोटी हो जाती थीं।

पहले खानबहादुर साहब का घर आया। वे 'शबे-ख़ैर' और 'खुदा हाफ़िज़' कहकर उतर गये। फिर हालदर उतरे। 'गुड नाइट' करके खीसें निपोरते हुए कोठी में चले गये।

घोड़ी की टापें खाली सड़क को बजाती चल रही थीं। पूरा वातावरण नींद की गोली की तरह मुझ पर हावी हो गया था।

सुबह आँखें खुली तो बाबा उठ चुके थे। दीना बाबा के लिए पेचवान ताजा कर रहा था। शायद पेचवान ताजा करने में, नैचे से बुकबुक निकलनेवाले पानी की आवाज से ही मेरी आँखें खुली थी। मैं चुपचाप उसका ताजा होना देखता और महसूस करता रहा था। ताजा हो जाने के कारण उसकी घुली-घुली गन्ध मेरी नाक में प्रवेश कर रही थी। जब दीना पेचवान ताजा करके चिलम भरने के लिए बैलखाने में जाने लगा तो मैंने धीरे-से पुकारा, "ताऊ!"

उसने मेरे पास आकर पूछा, "तुम अभी से उठ गये?"

"हाँ, बाबा कहाँ हैं?"

"अन्दर, कपड़े बदलने गये हैं।"

मैं चुपचाप पलग पर लेटा रहा। आकाश बिलकुल खाली-खाली था। दीना चिलम भरकर लाया। तम्बाकू सुलगने की हल्की गन्ध हवा में घुलती रही। दीना ने बाबा की कुर्सी के पास पेचवान रख दिया, 'नै' में सुनहरी मुनाली लगायी और मेरे पास आ गया।

"रात भैयाजी आ गये।" वह बाबूजी को भैयाजी कहकर पुकारता था। मेरे चेहरे पर हल्की-सी मुस्कुराहट आ गयी। "कब?" पूछते समय मेरे चेहरे पर मार-मुलक की खुशी इकट्ठी थी।

"एक बजे!"

"और काका साहब?"

"वे आज शाम तक आयेंगे।"

बाबूजी के लौट आने की खबर ने मेरे अन्दर उत्सुकता भर दी थी।

बाबा अन्दर से कपड़े बदलकर निकल रहे थे। मुझे जगा हुआ देखकर मुस्कुरा दिये। इस समय उनके चेहरे पर नितान्त खुलापन था। सिर नगा होने के कारण और भी अधिक अपनापन लग रहा था। शायद औपचारिक वस्त्र पहनते ही घर का आदमी भी बाहर का हो जाता है। मेरे पास आकर पूछा, "आज बहुत जल्दी उठ गये, बेटे।" मैं केवल मुस्कुरा दिया। उन्होंने भी वही बात बतलायी, "तुम्हारे बाबूजी आ गये।" दहलीज अभी तक

बाबा ने कोई जवाब नहीं दिया।

खानबहादुर को भी यह बात उठायी जानी ठीक नहीं लगी, बात बदलते हुए बोले, "डाक्टर साहब बुढ़ापे की भी कोई दवा है, आप लोग तो खुदा के भाई होते हैं, चीर-फाड़कर खड़ा कर देते हैं, फिर टाँके लगाकर जोड़ देते हैं।"

डाक्टर साहब हैं···हैं···हैं करके हँसने लगे। बाबा ने थोड़ा-सा मुस्कुराकर कहा, "किस बुढ़ापे का जिकर कर रहे हैं, शक्ल से तो इन्शाल्लाह जवान ही हैं!"

डाक्टर साहब इस बार भी हैं···हैं···हैं···करके हँस दिये। खानबहादुर ने लम्बी साँस लेकर कहा, "आप क्या जानें राय साहब, आप तो इस सबसे बरी हैं। कहीं नयी बेगम ने कह दिया, अमाँ आप तो···"

बाबा ने उनकी बात बीच में काटकर कहा, "माफ़ कीजिए, कम-अज़-कम शक्ल से तो नहीं ही कहेंगी।"

खानबहादुर ने निवृत्ति के मूड में कहा, "बाकी आप फ़िक्र न करें···" कोच-बक्स पर बैठे साईस की तरफ़ बाबा की नज़र चली गयी। नत्थी भी उसके बराबर में ही कोच-बक्स पर बैठ गया था। खानबहादुर भी समझ गये। डाक्टर हालदर हैं···हैं···करके हँसते रहे।

रात काफ़ी थी। सड़क बिल्कुल सुनसान हो रही थी। थोड़ी-थोड़ी दूर पर लैम्प-पोस्टों की रोशनी मैले कपड़ों में लिपटी-सी सड़कों पर मौजूद थी। कभी-कभी जब कोई कुत्ता या जानवर सामने आ जाता था, वज़ीर पाँव से घण्टी बजाता था। सूनेपन की पर्तें और मोटी हो जाती थीं।

पहले खानबहादुर साहब का घर आया। वे 'शबे-ख़ैर' और 'खुदा हाफ़िज' कहकर उतर गये। फिर हालदर उतरे। 'गुड नाइट' करके खीसें निपोरते हुए कोठी में चले गये।

घोड़ी की टापें खाली सड़क को बजाती चल रही थीं। पूरा वातावरण नींद की गोली की तरह मुझ पर हावी हो गया था।

सुबह आँखें खुली तो बाबा उठ चुके थे। दीना बाबा के लिए पेचवान ताज़ा कर रहा था। शायद पेचवान ताज़ा करने में, नेचे से बुकबुक निकलनेवाले पानी की आवाज़ से ही मेरी आँखें खुली थीं। मैं चुपचाप उसका ताज़ा होना देखता और महसूस करता रहा था। ताज़ा हो जाने के कारण उसकी धुली-धुली गन्ध मेरी नाक में प्रवेश कर रही थी। जब दीना पेचवान ताज़ा करके चिलम भरने के लिए बैलखाने में जाने लगा तो मैंने धीरे-से पुकारा, "ताऊ !"

उसने मेरे पास आकर पूछा, "तुम अभी से उठ गये ?"

"हाँ, बाबा कहाँ हैं ?"

"अन्दर, कपड़े बदलने गये हैं।"

मैं चुपचाप पलंग पर लेटा रहा। आकाश बिल्कुल खाली-खाली था। दीना चिलम भरकर लाया। तम्बाकू सुलगने की हल्की गन्ध हवा में घुलती रही। दीना ने बाबा की कुर्सी के पास पेचवान रख दिया, 'नै' में सुनहरी मुनाली लगायी और मेरे पास आ गया।

"रात भैयाजी आ गये।" वह बाबूजी को भैयाजी कहकर पुकारता था। मेरे चेहरे पर हल्की-सी मुस्कुराहट आ गयी। "कब ?" पूछते समय मेरे चेहरे पर मार-मुलक की खुशी इकट्ठी थी।

"एक बजे !"

"और काका साहब ?"

"वे आज शाम तक आयेंगे।"

बाबूजी के लौट आने की खबर ने मेरे अन्दर उत्सुकता भर दी थी।

बाबा अन्दर से कपड़े बदलकर निकल रहे थे। मुझे जगा हुआ देखकर मुस्कुरा दिये। इस समय उनके चेहरे पर नितान्त खुलापन था। सिर नंगा होने के कारण और भी अधिक अपनापन लग रहा था। शायद औपचारिक वस्त्र पहनते ही घर का आदमी भी बाहर का हो जाता है। मेरे पास आ— पूछा, "आज बहुत जल्दी उठ गये, बेटे !" मैं केवल मुस्कुरा दिया। — भी यही बात बतलायी, "तुम्हारे बाबूजी आ गये।" दहलीज

बन्द थी। बाबूजी अन्दर हवेली में सो रहे थे। मैं चुपचाप दहलीज़ खुलने की प्रतीक्षा करता रहा। कई बार लगा कुण्डी खोलने के लिए किवाड़ों को अन्दर से बाहर धकेला गया है। बाबा के हुक्का गुड़गुड़ाने की आवाज़ थोड़े-थोड़े समयान्तर से आ रही थी। बीच-बीच में वे मुनाली को होंठों पर फेरते थे। उनकी मूँछों के बाल इधर-उधर छितरा जाते थे।

बाबा ने दीना को पुकारा। आवाज़ पूरे सहन में गूँजकर ऊपर अटारी तक चली गयी। दीना दूध दुहाने गोशाला में चला गया था। लेकिन बाबा की पुकार उसे बीच ही में से लौटा लायी। दीना आकर खड़ा हो गया। बाबा आँखें बन्द किये कुछ सोच रहे थे। उसने थोड़ी इन्तज़ार के बाद कहा, "जी ?"

"रिपु क्यों नहीं आये ?"

"भैयाजी बता रहे थे, वे बड़े बाग में कलमें बँधवाने के लिए रुक गये, शाम या कल सुबह लौट आयेंगे।"

"तो देवा···" बिना वाक्य पूरा किये ही उससे कह दिया, "ठीक है जाओ।"

वह चला गया।

पलंग पर लेटा-लेटा आसमान की तरफ देख रहा था। आसमान में बहुत दूर उड़नेवाली चिड़िएँ किरमकाँटा बन गयी थीं। इतने ऊपर जाकर उनके पंख हिलते हैं उसमें अब भी कभी-कभी शक होता है, उस समय तो पूरा विश्वास था, नहीं हिलते। धूप अटारियों और ऊँची दीवारों पर खींची तिरछी-चिकनी रेखाएँ लग रही थीं। जहाँ धूप पड़ती थी, वहीं सुबह हो जाती थी।

दहलीज़ के दरवाजे की साँकल खड़कते ही, मेरा ध्यान ऊपर चला गया। बाबूजी बाहर आ रहे थे। मुझे देखते ही वे भी मुस्कुराये। बाबा के कारण कुछ गम्भीर भी बने रहे। बाबा के पाँव छुए। बाबा ने उनकी तरफ़ देखा भर, "तुम आ गये ?"

"जी !"

बाबा पेचवान पीते रहे।

बाबूजी मेरे पलंग पर बैठ गये थे। उनका हाथ मेरी पीठ सहलाने लगा। मेरे मन में जानने की उत्सुकता थी कि वे मेरे लिए क्या लाये हैं, मोर-पंख, बुलबुल या खरगोश ?

मैंने धीरे-से पूछा भी। उन्होंने आँखें झपकाते हुए गर्दन से स्वीकृति दे दी।

बाबा के बोलने से पहलेवाला अन्तराल काफ़ी देर तक चला। उन्होंने पूछा, "क्या हुआ ?"

"कुछ वसूली तो हुई है···" कहकर बाबूजी खामोश हो गये। बाबा भी खामोश थे। कुछ देर बाद बाबूजी पुन. बोले तो लगा, उनका वाक्य अभी तक जारी था, "लेकिन बरसात आ रही है, रावतपुर का डेरा गिरनेवाला है, कारिन्दे की लड़की की शादी भी है।"

बाबा ने केवल 'हूँ ऽऽ' किया। पेचवान का गुड़गुड़ाना जारी रहा।

"तुमने क्या किया ?"

"काका साहब भी तो साथ गये थे।"

"तुम दोनों ने ही सही।"

"डेरा पक्का कराने के लिए काम लगवा दिया गया है।"

"हूँ ऽऽ"

बाबा के चेहरे पर खिंचाव था। बाबूजी भी इस बात के अहसास से काफ़ी हतप्रभ हो गये थे।

बाबा ने भवें टेढी करके कहा, "तुम दोनों से कह चुका हूँ, गवर्नर की दावत का इन्तज़ाम अभी से होना चाहिए। अब तो और भी ज़रूरी हो गया, ब्राउन हिन्दुस्तानी आदमी के ज़रिये किसी अंग्रेज की बेइज्ज़ती बर्दाश्त नहीं कर सकता···"

"जी ऽ!" बाबूजी के मुँह से कुछ आश्चर्य के साथ निकला।

"कल क्लब में स्मिथ से झड़प हो गयी। वह अब नाइटहुडवाली लिस्ट से मेरा नाम कटवाने की कोशिश करेगा।" एक छोटे-से समयान्तर के बाद, बाबा ने धीरे-से कहा, "विक्ट्री (जीत) की खुशी में भी शायद मुझे पार्टी देनी पड़े।"

बाबूजी की गर्दन नीचे झुकी हुई थी। बाबा उठ गये। चिलम में रखी उपले की आग पर काफ़ी राख आ गयी थी। मेरा मन उसे कुरेदकर अंगारे देखने को हो आया!

उस दिन बाबा काफ़ी व्यस्त रहे। तैयार होकर दस बजे उन्होंने जोड़ी मँगवायी। खानबहादुर और लाला चतरसिंह से पुछवाया, "कलक्टर साहब के यहाँ चलेंगे?" खानबहादुर शायद जा चुके थे। लाला चतरसिंह ने कहला दिया, "इन्तज़ार करें, मैं खुद ही उधर आता हूँ।"

मेरा मन था बड़े दिन की तरह ही बाबा के साथ जोड़ी में बैठकर आज भी कलक्टर साहब के यहाँ जाऊँ। वैसे भी मिसेज़ ब्राउन के यहाँ जाना हमेशा अच्छा लगता था। वे हमेशा 'हाउ लवली चाइल्ड' कहकर मेरा स्वागत करती थीं। उनका दिया हुआ एक जूड-बाक्स भी मेरे पास था।

बाबा जब लाला चतरसिंह की प्रतीक्षा कर रहे थे, मैं उनकी कुर्सी के पास खड़ा, उनके चेहरे को एकटक देख रहा था। शायद बाबा बिना कहे मेरे मन की बात समझ रहे थे। मैंने उनकी मूँछों के नजदीक एक बिखराव-सा महसूस किया और चश्मे के बराबर से उनकी नजरों को तिरछी होकर अपनी ओर देखते हुए भी पाया। कुछ बोले नहीं।

लाला चतरसिंह अपने हाथ पर बेंत लटकाये आते हुए दिखायी दिये। चलते हुए उनकी टाँगें लचका करती थीं। मैं तब भी बाबा की तरफ़ देखता रहा। मुझे लगा, बस बाबा अब छोड़कर चले जायेंगे।

लाला चतरसिंह ने बाबा को 'जैराम जी की' की और मुझसे बोले, "क्यों बे उल्लू के पट्ठे। बाबाजी की कुर्सी से लगा क्या कर रहा है?" इतने लोगों में केवल लाला चतरसिंह ही मुझे उल्लू का पट्ठा कहकर सम्बोधित किया करते थे। बाबा के सामने तो कम, बाबूजी के सामने बिला नागा। एक बार जब दो वर्ष और छोटा था तो मेरे मुँह से निकल गया था, 'मैं क्यों होता उल्लू का पट्ठा…' इसके आगे की बात कहने से पहले ही बाबूजी ने घुड़क दिया था। हालांकि मैं खिसियाना होकर बार-बार कहता रहा था, 'बाबाजी भी तो हमें कहते हैं…।' उन्हें बाबूजी 'चचा' कहते थे—हालांकि